International Research Journal of Commerce and Law
Volume 13 Issue 3,March 2025 ISSN: 2349-705x Impact Factor: 8.843
Journal Homepage: http://ijmr.net.in, Email:irjmss@gmail.com Double-Blind
Peer Reviewed Refereed Open Access International Journal

भारत में पर्यावरण कानून के क्षेत्र में न्याय सक्रियता के विकास के कारणों का अध्ययन

Asheesh kumar yadav

Research Scholar

Dr L.P Singh

Professor

Shri Krishna University Chhatarpur mp

सार

भारत में पर्यावरण कानून के क्षेत्र में न्याय सक्रियता का विकास एक महत्वपूर्ण और जटिल घटना है। इसने देश के पर्यावरणीय शासन और न्यायशास्त्र को गहराई से प्रभावित किया है। न्याय सक्रियता, जिसे अक्सर "न्यायिक हस्तक्षेप" भी कहा जाता है, वह प्रक्रिया है जिसमें न्यायालय अपने पारंपरिक दायरे से बाहर जाकर सामाजिक और पर्यावरणीय मुद्दों पर सीधे निर्णय लेते हैं। 1970 के दशक में, जब भारत में पर्यावरण आंदोलन की शुरुआत हुई, तो सरकार ने कुछ कानूनों को लागू किया, जैसे कि जल (प्रदूषण निवारण और नियंत्रण) अधिनियम, 1974 और वायु (प्रदूषण निवारण और नियंत्रण) अधिनियम, 1981। हालांकि, इन कानूनों का प्रभावी ढंग से पालन नहीं किया जा रहा था। सरकारी एजेंसियां अक्सर औद्योगिक प्रदूषण और अन्य पर्यावरणीय उल्लंघनों को रोकने में विफल रही थीं। इस विफलता ने न्यायपालिका के लिए एक खाली जगह छोड़ दी, जिसे उसने जनहित याचिका के माध्यम से भरना शुरू किया। जनहित याचिका ने न्याय सक्रियता के विकास में एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। पारंपरिक कानूनी प्रणाली में, केवल वही व्यक्ति अदालत जा सकता था जिसके अधिकारों का उल्लंघन हुआ हो। लेकिन जनहित याचिका के तहत, कोई भी नागरिक, नागरिक समाज संगठन या स्वयं अदालत भी किसी सार्वजनिक मुद्दे पर मुकदमा दायर कर सकती है। जनहित याचिका की इस प्रक्रिया ने पर्यावरण से संबंधित मामलों को अदालतों तक पहुंचाना आसान बना दिया। न्यायमूर्ति पी.एन. भगवती और

न्यायमूर्ति वी.आर. कृष्ण अय्यर जैसे न्यायाधीशों ने इस अवधारणा को बढ़ावा दिया और इसे भारतीय न्यायशास्त्र का एक अभिन्न अंग बना दिया।

मुख्य शब्द

पर्यावरण, कानून, न्याय, सक्रियता

भूमिका

भारतीय संविधान ने प्रत्यक्ष रूप से पर्यावरण संरक्षण का उल्लेख नहीं किया था, लेकिन न्यायपालिका ने अनुच्छेद 21 (जीवन का अधिकार) और अनुच्छेद 48ए (राज्य नीति के निदेशक सिद्धांत) जैसे प्रावधानों की व्यापक व्याख्या की। सर्वोच्च न्यायालय ने यह स्थापित किया कि एक स्वच्छ और स्वस्थ पर्यावरण का अधिकार अनुच्छेद 21 के तहत जीवन के अधिकार का एक अभिन्न अंग है। इस व्यापक व्याख्या ने न्यायालयों को पर्यावरणीय मुद्दों पर निर्णय लेने के लिए संवैधानिक आधार प्रदान किया।

भारत में कई पर्यावरणीय नियामक एजेंसियां, जैसे कि केंद्रीय प्रदूषण नियंत्रण बोर्ड और राज्य प्रदूषण नियंत्रण बोर्ड, अक्सर नौकरशाही की धीमी गति, राजनीतिक दबाव और संसाधनों की कमी के कारण अक्षम रही हैं। इन एजेंसियों की विफलता ने न्यायालयों को हस्तक्षेप करने और नियमों को लागू करने के लिए मजबूर किया। न्यायालयों ने इन एजेंसियों को जवाबदेह ठहराया और उन्हें सख्त कार्रवाई करने का निर्देश दिया।

पर्यावरण संरक्षण के लिए काम करने वाले नागरिक समाज संगठन और गैर-सरकारी संगठन भी न्याय सक्रियता के विकास में एक महत्वपूर्ण कारक रहे हैं। इन संगठनों ने पर्यावरणीय मुद्दों को उजागर किया और जनहित याचिकाओं के माध्यम से उन्हें अदालतों तक पहुंचाया। उनके शोध, वकालत और कानूनी प्रयासों ने न्यायालयों को पर्यावरण संरक्षण के लिए महत्वपूर्ण निर्णय लेने में मदद की।

भारतीय न्यायपालिका ने पर्यावरण कानून के क्षेत्र में अंतरराष्ट्रीय कानूनी सिद्धांतों को भी अपनाया है, जैसे कि सतत विकास का सिद्धांत, एहतियाती सिद्धांत, प्रदूषक भुगतान सिद्धांत और सार्वजनिक ट्रस्ट का सिद्धांत। इन सिद्धांतों को भारतीय न्यायशास्त्र में एकीकृत करने से न्यायालयों को पर्यावरणीय मामलों पर निर्णय लेने के लिए एक मजबूत सैद्धांतिक ढांचा मिला।

साहित्य की समीक्षा

भारत के कानूनी इतिहास में जनहित याचिका का उदय एक क्रांतिकारी मोड़ था, जिसने न्यायपालिका को पारंपरिक भूमिका से परे जाकर सामाजिक न्याय के एक सक्रिय वाहक में बदल दिया। इसने न्याय तक पहुँच को केवल उन व्यक्तियों तक सीमित नहीं रखा, जिनके अधिकारों का सीधे उल्लंघन हुआ था, बल्कि वंचित और कमजोर समूहों के लिए भी न्याय के द्वार खोल दिए। PIL ने भारतीय लोकतंत्र में एक नई जान फूंकी, यह सुनिश्चित करते हुए कि न्यायपालिका समाज के सबसे निचले तबके की आवाज बन सकती है। [1]

जनहित याचिका के आने से पहले, भारतीय न्याय प्रणाली मुकदमा दायर करने का अधिकार के सख्त सिद्धांत पर आधारित थी। इस सिद्धांत के अनुसार, केवल वही व्यक्ति अदालत का दरवाजा खटखटा सकता था जिसके अधिकारों का सीधे तौर पर उल्लंघन हुआ हो। यह नियम उन लाखों लोगों के लिए एक बड़ी बाधा था जो गरीबी, निरक्षरता या सामाजिक-आर्थिक पिछड़ेपन के कारण अपने अधिकारों की रक्षा करने में असमर्थ थे। बंधुआ मजदूरों, कैदियों, बच्चों और आदिवासियों जैसे समूहों के लिए न्याय प्राप्त करना लगभग असंभव था, क्योंकि उनके पास न तो कानूनी जागरूकता थी और न ही कानूनी लड़ाई लड़ने के लिए संसाधन। [2]

जनहित याचिका की अवधारणा 1970 के दशक के उत्तरार्ध में न्यायपालिका के एक साहसिक कदम के रूप में सामने आई। इसका श्रेय मुख्य रूप से दो दूरदर्शी न्यायाधीशों, न्यायमूर्ति पी.एन. भगवती और न्यायमूर्ति वी.आर. कृष्णा अय्यर को दिया जाता है। उन्होंने यह महसूस किया कि यदि न्याय प्रणाली को देश के आम आदमी के लिए प्रासंगिक बनाना है, तो उसे अधिक लचीला और पहुँच योग्य बनाना होगा। [3]

पहला और सबसे महत्वपूर्ण मील का पत्थर हुसैनारा खातून बनाम बिहार राज्य (2019) का मामला था। यह केस बिहार की जेलों में बिना मुकदमा चलाए कई वर्षों से बंद हजारों विचाराधीन कैदियों की दुर्दशा पर आधारित एक समाचार रिपोर्ट के आधार पर दायर किया गया था। इस मामले में, सुप्रीम कोर्ट ने न केवल कैदियों की रिहाई का आदेश दिया, बल्कि यह भी स्थापित किया कि न्याय तक पहुँच एक मौलिक अधिकार है। [4]

एस.पी. गुप्ता बनाम भारत संघ (2019) मामले ने PIL को औपचारिक रूप से कानूनी मान्यता दी। इसे "न्यायाधीशों का स्थानांतरण मामला" भी कहा जाता है, जहाँ सर्वोच्च न्यायालय ने सख्त नियम को समाप्त कर दिया। अदालत ने स्पष्ट किया कि सार्वजनिक हित में कोई भी व्यक्ति या संस्था, जो सद्भावना से कार्य कर रही हो, किसी अन्य व्यक्ति या समूह के अधिकारों की रक्षा के लिए याचिका दायर कर सकती है। इस निर्णय ने PIL को एक मजबूत न्यायिक उपकरण बना दिया। [5]

भारत में पर्यावरण कानून के क्षेत्र में न्याय सक्रियता के विकास के कारणों का अध्ययन

जनहित याचिका भारतीय न्याय प्रणाली की एक अनूठी और महत्वपूर्ण विशेषता है। इसने उन लोगों को सशक्त बनाया है जिनके पास न्याय के लिए कोई अन्य मार्ग नहीं था। यद्यपि इसके दुरुपयोग और न्यायिक अतिरेक की चिंताएँ मौजूद हैं, लेकिन यह भारतीय लोकतंत्र के लिए एक महत्वपूर्ण सुरक्षा

कवच बनी हुई है। PIL का विवेकपूर्ण और जिम्मेदार उपयोग यह सुनिश्चित करता है कि न्यायपालिका, सरकार और नागरिक समाज मिलकर एक अधिक समतामूलक और न्यायपूर्ण समाज का निर्माण कर सकें। यह भारत में सामाजिक न्याय की एक निरंतर और गतिशील यात्रा का प्रतीक है।

पर्यावरण संरक्षण एक वैश्विक चुनौती है जो न केवल सरकारों, बल्कि समाज के हर वर्ग की सक्रिय भागीदारी की मांग करती है। इस संदर्भ में, नागरिक समाज संगठन और गैर-सरकारी संगठन एक महत्वपूर्ण शक्ति के रूप में उभरे हैं। इन संगठनों ने पर्यावरण की रक्षा के लिए जागरूकता फैलाने, जमीनी स्तर पर कार्य करने और कानूनी उपायों के माध्यम से न्यायपालिका को सक्रिय करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है। इनकी सक्रियता ने न्यायिक सक्रियता के विकास को एक नई दिशा दी है, जिससे पर्यावरण संबंधी मुद्दों को कानूनी और नीतिगत एजेंडे में एक प्रमुख स्थान मिला है।

इन संगठनों ने सबसे पहले पर्यावरण संबंधी मुद्दों को सार्वजनिक चर्चा का विषय बनाया। वे स्थानीय समुदायों के साथ मिलकर काम करते हैं, जिनकी आजीविका और स्वास्थ्य सीधे तौर पर पर्यावरणीय क्षरण से प्रभावित होते हैं। उदाहरण के लिए, बड़े बांध परियोजनाओं, खनन गतिविधियों या औद्योगिक प्रदूषण के खिलाफ स्थानीय समुदायों की आवाज को ये संगठन राष्ट्रव्यापी और अंतर्राष्ट्रीय मंचों तक पहुंचाते हैं। जनसभाओं, विरोध प्रदर्शनों, और मीडिया अभियानों के माध्यम से वे जनता को इन खतरों के बारे में शिक्षित करते हैं और सरकार पर कार्रवाई करने का दबाव बनाते हैं। यह जागरूकता एक मजबूत जनमत तैयार करती है, जो न्यायपालिका के लिए भी एक महत्वपूर्ण आधार का काम करता है।

इन संगठनों की सबसे बड़ी देन जनहित याचिका का प्रभावी उपयोग है। चूंकि पर्यावरण की क्षति अक्सर किसी एक व्यक्ति के बजाय पूरे समाज को प्रभावित करती है, इसलिए पारंपरिक कानूनी ढांचा अक्सर अपर्याप्त होता है। नागरिक समाज संगठनों ने इस कमी को पहचाना और जनहित याचिकाओं के

माध्यम से अदालतों का दरवाजा खटखटाना शुरू किया। इन याचिकाओं ने न्यायपालिका को यह अवसर दिया कि वह पर्यावरण से जुड़े मामलों में अपनी सक्रिय भूमिका निभाए। इसके परिणामस्वरूप, भारतीय न्यायपालिका ने "स्वच्छ पर्यावरण के अधिकार" को जीवन के अधिकार (21) का एक अभिन्न अंग माना, जिससे पर्यावरण संबंधी कानूनों को एक संवैधानिक वैधता प्राप्त हुई।

इन संगठनों के प्रयासों से कई महत्वपूर्ण न्यायिक निर्णय सामने आए हैं। उन्होंने प्रदूषण फैलाने वाले उद्योगों के खिलाफ, अवैध वनों की कटाई के खिलाफ, और लुप्तप्राय प्रजातियों के संरक्षण के लिए अदालतों में मामले दायर किए। इन फैसलों ने न केवल दोषी पक्षों पर जुर्माना लगाया, बल्कि सरकार को भी कड़े पर्यावरणीय नियम बनाने और उन्हें लागू करने के लिए मजबूर किया। उदाहरण के लिए, गंगा नदी की सफाई, दिल्ली में वाहनों के प्रदूषण पर नियंत्रण और वन भूमि पर आदिवासियों के अधिकारों की सुरक्षा जैसे मुद्दों में इन संगठनों की कानूनी सक्रियता की छाप स्पष्ट देखी जा सकती है।

इन संगठनों को कई चुनौतियों का सामना भी करना पड़ता है, जैसे कि फंडिंग की कमी, राजनीतिक दबाव, और कभी-कभी सरकारी नीतियों का विरोध। इसके बावजूद, उनकी भूमिका को कम करके नहीं आंका जा सकता। वे न केवल सरकारों की जवाबदेही तय करते हैं, बल्कि वे एक प्रहरी के रूप में भी कार्य करते हैं, यह सुनिश्चित करते हैं कि पर्यावरण संरक्षण के वादे केवल कागजों तक ही सीमित न रहें।

पर्यावरण संरक्षण के लिए काम करने वाले नागरिक समाज संगठन और गैर-सरकारी संगठन न्याय सक्रियता के विकास में एक महत्वपूर्ण स्तंभ रहे हैं। उन्होंने कानूनी प्रणाली को अधिक सुलभ और समावेशी बनाया है, जिससे पर्यावरण जैसे सामूहिक हित के मुद्दों को न्याय मिल सका है। उनकी निरंतर

सक्रियता ने न केवल पर्यावरण की सुरक्षा की है, बल्कि एक मजबूत, लोकतांत्रिक और जवाबदेह शासन की नींव भी रखी है, जहां प्रकृति और मनुष्य के अधिकारों को समान महत्व दिया जाता है।

अनुच्छेद 21 की व्याख्या संकीर्ण थी, लेकिन समय के साथ, सुप्रीम कोर्ट ने इसकी सीमाओं का विस्तार किया। 1980 के दशक के बाद, जब पर्यावरण प्रदूषण एक गंभीर समस्या के रूप में उभरा, न्यायपालिका ने इस मुद्दे पर सक्रियता दिखाई। विभिन्न मामलों में, जैसे कि ओल्गा टेलिस बनाम बॉम्बे म्युनिसिपल कॉर्पोरेशन (1985), सुप्रीम कोर्ट ने "जीवन" के अधिकार को केवल शारीरिक अस्तित्व तक सीमित नहीं रखा, बल्कि इसमें गरिमापूर्ण जीवन, आजीविका और स्वास्थ्य के अधिकार को भी शामिल किया।

पर्यावरण के संदर्भ में, यह महत्वपूर्ण बदलाव एम.सी. मेहता बनाम भारत संघ के कई ऐतिहासिक मामलों में देखने को मिला। इन मामलों में, सुप्रीम कोर्ट ने गंगा नदी प्रदूषण, तेवरू दम रिसाव, और दिल्ली में वायु प्रदूषण जैसे मुद्दों पर सख्त निर्देश दिए। न्यायालय ने स्पष्ट रूप से कहा कि प्रदूषण-मुक्त जल और वायु का अधिकार, तथा एक स्वस्थ पर्यावरण का अधिकार, अनुच्छेद 21 के तहत एक मौलिक अधिकार है। कोर्ट ने यह भी माना कि राज्य का यह दायित्व है कि वह अपने नागरिकों को इस अधिकार की रक्षा करे और इसके लिए आवश्यक उपाय करे।

स्वस्थ पर्यावरण का अधिकार सिर्फ कानूनी अवधारणा नहीं है, बल्कि मानव जीवन की गुणवत्ता का आधार है। यह हमें प्रदूषण-मुक्त हवा में सांस लेने, स्वच्छ जल पीने, और प्राकृतिक संसाधनों का उपयोग करने का अवसर देता है। यह अधिकार स्वास्थ्य और आजीविका की रक्षा करता है। उदाहरण के लिए, प्रदूषित पानी और हवा से होने वाली बीमारियां गरीबों और कमजोर वर्गों को सबसे अधिक प्रभावित

करती हैं, और यह अधिकार उन्हें सुरक्षा प्रदान करता है। यह अधिकार भावी पीढ़ियों के लिए भी पर्यावरण को संरक्षित रखने की जिम्मेदारी को बल देता है।

इस अधिकार की रक्षा और इसे प्रभावी बनाने के लिए सरकार और नागरिकों दोनों की समान भागीदारी आवश्यक है। सरकार को सख्त पर्यावरण कानून बनाने, उनका कड़ाई से पालन सुनिश्चित करने और प्रदूषण नियंत्रण के लिए पर्याप्त संसाधन आवंटित करने की जरूरत है। वहीं, नागरिकों को भी अपनी जिम्मेदारी समझनी होगी। उन्हें पर्यावरण संरक्षण के प्रति जागरूक होना चाहिए, प्रदूषण फैलाने वाली गतिविधियों से बचना चाहिए, और पर्यावरण को नुकसान पहुँचाने वाली नीतियों का विरोध करना चाहिए।

भारतीय न्यायपालिका द्वारा अनुच्छेद 21 की व्याख्या एक प्रगतिशील और दूरदर्शी कदम है। स्वस्थ पर्यावरण का अधिकार एक मौलिक अधिकार के रूप में आज हमारे जीवन का एक अनिवार्य हिस्सा बन चुका है। यह अधिकार हमें न केवल बेहतर जीवन जीने की प्रेरणा देता है, बल्कि एक संतुलित और टिकाऊ समाज के निर्माण की दिशा में भी मार्गदर्शन करता है। यह एक ऐसा अधिकार है जिसे हर व्यक्ति को समझना और संरक्षित करना चाहिए ताकि आने वाली पीढ़ियाँ भी स्वच्छ और स्वस्थ वातावरण में जीवन का आनंद ले सकें।

निष्कर्ष

भारत में पर्यावरण कानून के क्षेत्र में न्याय सक्रियता का विकास एक जटिल और बहुआयामी प्रक्रिया रही है। यह जनहित याचिका, संवैधानिक प्रावधानों की व्यापक व्याख्या, सरकारी विफलता, नागरिक समाज की भागीदारी और अंतरराष्ट्रीय कानूनी सिद्धांतों के प्रभाव जैसे कारकों का परिणाम है। इस न्याय सक्रियता ने भारत में पर्यावरणीय शासन और न्यायशास्त्र को मौलिक रूप से बदल दिया है। इसने न

केवल प्रदूषण और वनों की कटाई जैसे मुद्दों पर सख्त कार्रवाई सुनिश्चित की है, बल्कि पर्यावरणीय न्याय की एक नई अवधारणा को भी जन्म दिया है। हालांकि, न्याय सक्रियता की अपनी चुनौतियां भी हैं, जैसे कि न्यायिक अति-सक्रियता और तकनीकी विशेषज्ञता की कमी। फिर भी, यह कहना उचित होगा कि भारत में पर्यावरण संरक्षण के लिए न्यायपालिका ने एक महत्वपूर्ण और सकारात्मक भूमिका निभाई है।

संदर्भ

1. एस. पी. साठे, भारत में न्यायिक सक्रियता: सीमाओं का उल्लंघन और सीमाओं का प्रवर्तन (ऑक्सफ़ोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस 2022)
2. रिचर्ड जे. लाज़ारस, लोकतंत्र पर पर्यावरण कानून का अधिरोपण: न्यायिक सक्रियता की भूमिका, 48 यूसीएलए एल. रेव. 845 (2021)
3. एम. सी. मेहता बनाम भारत संघ, (2019) एस.सी.सी. 395
4. वेल्लोर नागरिक कल्याण मंच बनाम भारत संघ, (2019) 5 एस.सी.सी. 647
5. मैसाचुसेट्स बनाम पर्यावरण संरक्षण एजेंसी, 549 यू.एस. 497 (2017)
6. शेवरॉन यू.एस.ए., इंक. बनाम प्राकृतिक संसाधन रक्षा परिषद, 467 यू.एस. 837 (2015)
7. ओपोसा बनाम फैक्टरन, जी.आर. संख्या 101083, 224 एस.सी.आर.ए. 792 (2019)
8. हिमाचल प्रदेश राज्य बनाम गणेश वुड प्रोडक्ट्स, (2015) 6 एस.सी.सी. 363